International Journal Of Advances In
ENGINEERING, SCIENCE, COMMERCE, MANAGEMENT AND LAW

International Journal of Advances in Engineering, Science, Commerce, Management, and Law
ISSN : 3048-8427 (Multidisciplinary, Multi-Lingual, Peer Reviewed Open Access Journal)

Original Article

वैश्वीकरण का आदिवासी समाज की आर्थिकी पर प्रभाव – झारखण्ड के संदर्भ में एक अध्ययन

महेश कुमार दुबे

शोधछात्र

इतिहास विभाग

बिनोद बिहारी महतो कोयलांचल विश्वविद्यालय, धनबाद (झारखण्ड)

सार

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसने विश्व स्तर पर समाज, अर्थव्यवस्था, राजनीति, संस्कृति एवं पर्यावरण को गहराई से प्रभावित किया है। यह मूलतः एक पाश्चात्य अवधारणा है, जिसकी जड़ें आर्थिक निश्चयवाद, पूंजीवाद एवं नव-उपनिवेशवाद से जुड़ी हुई हैं। इसके प्रभाव समकालीन विश्व में हर क्षेत्र में देखे जा सकते हैं। हालांकि वैश्वीकरण के कुछ सकारात्मक पहलू जैसे तकनीकी विकास, सूचना का आदान-प्रदान और वैश्विक बाजारों तक पहुँच अवश्य हैं, परंतु इसके दुष्प्रभाव विशेष रूप से पारंपरिक और हाशिए पर खड़े समुदायों पर अधिक गहराई से पड़े हैं। झारखण्ड का आदिवासी समाज जो मुख्यतः कृषि, वन उत्पादों एवं पारंपरिक शिल्पकला पर आधारित आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था पर निर्भर था, वैश्वीकरण की प्रक्रिया में बाह्य बाजारीकरण, औद्योगीकरण और भूमि अधिग्रहण जैसी नीतियों से प्रभावित हुआ है। इससे न केवल उनकी आर्थिक संरचना कमजोर हुई है, बल्कि पारंपरिक ज्ञान, संसाधनों पर नियंत्रण और सांस्कृतिक पहचान भी संकट में पड़ गई है। खनन और उद्योगों की स्थापना के नाम पर बड़े पैमाने पर विस्थापन और आजीविका के साधनों का ह्रास देखा गया है, जिससे सामाजिक असंतुलन बढ़ा है। इस अध्ययन का उद्देश्य झारखण्ड के आदिवासी समाज की आर्थिकी पर वैश्वीकरण के बहुआयामी प्रभावों का विश्लेषण करना है। यह शोध यह दर्शाता है कि कैसे वैश्वीकरण ने एक ओर विकास का भ्रम उत्पन्न किया, वहीं दूसरी ओर आदिवासी समुदायों की पारंपरिक जीविकोपार्जन प्रणाली को क्षति पहुंचाई है। नीति-निर्माताओं को यह समझना आवश्यक है कि विकास के नाम पर स्थानीय समुदायों की स्वायत्तता और पर्यावरणीय संतुलन को अनदेखा करना दूरगामी रूप से हानिकारक हो सकता है।

कुंजी शब्द: वैश्वीकरण, आदिवासी आर्थिकी, झारखण्ड, पूंजीवाद, विस्थापन

अध्ययन की पृष्ठ भूमि

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत विश्व के विभिन्न देशों के समाज, अर्थव्यवस्था, संस्कृति, राजनीति एवं तकनीकी तंत्र एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़ते जा रहे हैं। इस प्रक्रिया में वस्तुओं, सेवाओं, पूंजी, सूचना और मानव संसाधनों का अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निर्बाध आदान-प्रदान संभव होता है। वैश्वीकरण की उत्पत्ति 15वीं शताब्दी में उपनिवेशवाद और समुद्री खोजों के साथ मानी जाती है, जब यूरोपीय देशों ने व्यापार और सत्ता विस्तार के उद्देश्य से एशिया, अफ्रीका और अमेरिका में उपनिवेश स्थापित किए। औद्योगिक क्रांति (18वीं-19वीं सदी) और उसके बाद संचार व परिवहन के साधनों के विकास ने इस प्रक्रिया को और तीव्र किया। 20वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उदारीकरण, निजीकरण और विश्व व्यापार संगठन (WTO) जैसे वैश्विक संस्थानों की स्थापना के साथ यह प्रक्रिया एक आर्थिक रणनीति के रूप में उभरी। आज वैश्वीकरण विश्व व्यवस्था को गहराई से प्रभावित करने वाली प्रमुख प्रक्रिया बन चुकी है।

झारखंड में कुल 32 जनजातियां पाई जाती हैं, जिनकी जनसंख्या लगभग 86,45,042 है, जो राज्य की कुल जनसंख्या का 26.2% है (जनगणना, 2011)। इन जनजातियों में 8 आदिम जनजातियां भी शामिल हैं, जिनकी जनसंख्या 1,92,425 है, जो कुल जनजातीय जनसंख्या का 0.72% है। संथाल, जो झारखंड की सबसे बड़ी जनजाति है, इन समुदायों में प्रमुख है (गौतम और सिंह , 2022)। झारखंड के आदिवासी समुदाय में महिलाओं का प्रतिशत 50.06% और पुरुषों का प्रतिशत 49.94% है। संताल, जो झारखंड की सबसे बड़ी जनजाति है, सबसे बड़ी संख्या में है, और इसकी जनसंख्या लगभग 28 लाख है। इसके बाद उरांव जनजाति है, जिसकी जनसंख्या 17.44 लाख है, और मुंडा जनजाति

की जनसंख्या 12.52 लाख है। इसके अतिरिक्त, खड़िया, गोंड, कोल, कांवर, सबर, असुर, बैगा, बंजारा, बाथुडी, बेदिया, बिंझिया, बिरहोर, बिरजिया, चेरो, चिक-बड़ाइक, गोरैत, हो, करमाली, खरवार, खोंड, किसान (नगेसिया), कोरा (मुंडी-कोरा), कोरवा, लोहरा, महली, माल-पहाड़िया, परहैया, सौरिया-पहाड़िया और भूमिज जैसी कई अन्य जनजातियां भी राज्य में निवास करती हैं (कुमारी एवं सिन्हा, 2024) । झारखण्ड का आदिवासी समाज जो मुख्यतः कृषि, वन उत्पादों एवं पारंपरिक शिल्पकला पर आधारित आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था पर निर्भर था, वैश्वीकरण की प्रक्रिया में बाह्य बाजारीकरण, औद्योगीकरण और भूमि अधिग्रहण जैसी नीतियों से प्रभावित हुआ है। इससे न केवल उनकी आर्थिक संरचना कमजोर हुई है, बल्कि पारंपरिक ज्ञान, संसाधनों पर नियंत्रण और सांस्कृतिक पहचान भी संकट में पड़ गई है। खनन और उद्योगों की स्थापना के नाम पर बड़े पैमाने पर विस्थापन और आजीविका के साधनों का ह्रास देखा गया है, जिससे सामाजिक असंतुलन बढ़ा है (जयसवाल, और साहा, 2014)।

वैश्वीकरण का आदिवासी समाज की आर्थिकी पर प्रभाव

वैश्वीकरण एक ऐसी वैश्विक प्रक्रिया है जिसने समग्र विश्व को आर्थिक, सांस्कृतिक, सामाजिक और तकनीकी रूप से जोड़ने का कार्य किया है। यद्यपि इस प्रक्रिया के अनेक नकारात्मक प्रभाव विशेष रूप से पारंपरिक और हाशिए पर खड़े समुदायों पर देखे गए हैं (चौधरी, 2018) फिर भी इसके कुछ सकारात्मक प्रभावों से इनकार नहीं किया जा सकता, विशेषकर जब हम झारखंड जैसे राज्य के आदिवासी समाज की आर्थिकी की बात करते हैं। वैश्वीकरण ने सूचना और संचार क्रांति के माध्यम से आदिवासी समुदायों को मुख्यधारा से जोड़ने का मार्ग प्रशस्त किया है। मोबाइल, इंटरनेट और सामाजिक मीडिया के प्रसार से आदिवासी युवाओं को शिक्षा, कृषि, स्वास्थ्य और सरकारी योजनाओं की जानकारी प्राप्त होने लगी है, जिससे वे पारंपरिक जीवनशैली के साथ-साथ आधुनिक संसाधनों का उपयोग भी करने लगे हैं (दास, 2013) ।

इसके अतिरिक्त, वैश्विक बाजारों तक पहुँच के कारण आदिवासी समुदायों के हस्तशिल्प, पारंपरिक वस्त्र, बांस व लकड़ी के उत्पाद, जड़ी-बूटियाँ और जैविक कृषि उत्पादों की माँग बढ़ी है (महमूद, 2021)। इससे उनकी पारंपरिक अर्थव्यवस्था को नए अवसर प्राप्त हुए हैं और स्वरोजगार को बढ़ावा मिला है। ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म्स और स्थानीय स्टार्टअप्स के सहयोग से अब कई आदिवासी कारीगर एवं किसान अपने उत्पादों को देश-विदेश तक पहुँचा पा रहे हैं, जिससे उनकी आय में वृद्धि हो रही है। पर्यटन क्षेत्र में भी वैश्वीकरण ने नई संभावनाएँ खोली हैं। सांस्कृतिक पर्यटन, इको-टूरिज्म और होमस्टे जैसी अवधारणाओं ने आदिवासी क्षेत्रों में रोजगार के अवसर पैदा किए हैं। इससे न केवल आर्थिक गतिविधियों में वृद्धि हुई है, बल्कि पारंपरिक कला, संस्कृति और जीवनशैली के संरक्षण को भी प्रोत्साहन मिला है। इसके अतिरिक्त, विभिन्न अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं, गैर-सरकारी संगठन एवं सरकारी एजेंसियाँ अब आदिवासी समुदायों के साथ मिलकर उनके आर्थिक विकास, महिला सशक्तिकरण और शिक्षा के क्षेत्र में कार्य कर रही हैं (वेंकटेश्वर, 2023)। आज आदिवासी महिलाएं स्वयं सहायता समूहों के माध्यम से लघु उद्योग चला रही हैं और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बन रही हैं। इन सभी परिवर्तनों ने आदिवासी समाज की आर्थिकी को एक नई दिशा दी है। यद्यपि इन लाभों का वितरण असमान है, परंतु यदि वैश्वीकरण की दिशा को स्थानीय आवश्यकताओं और सांस्कृतिक मूल्यों के अनुरूप ढाला जाए, तो यह आदिवासी समुदायों के आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण में अहम भूमिका निभा सकता है।

वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने जहां एक ओर दुनिया को आपस में जोड़ा है, वहीं दूसरी ओर इसने अनेक पारंपरिक और प्रकृति-आधारित समुदायों, विशेषकर आदिवासी समाज की आर्थिकी पर गंभीर नकारात्मक प्रभाव डाले हैं (भट्टाचार्य, सचदेव और सेठ, 2021)। झारखंड जैसे राज्य, जहां आदिवासी जनसंख्या एक बड़ी संख्या में निवास करती है, वहाँ वैश्वीकरण के कारण आई औद्योगिक नीतियों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के आगमन और संसाधन आधारित विकास के मॉडल ने उनकी पारंपरिक आजीविका को संकट में डाल दिया है (घोष, 2015)। भूमि अधिग्रहण, खनन, वन कटाई और बड़े-बड़े उद्योगों की स्थापना के चलते आदिवासियों को उनके पारंपरिक जल, जंगल और जमीन से बेदखल किया गया है। इससे उनकी आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था, जो कृषि, वनों से प्राप्त संसाधनों और पारंपरिक शिल्प पर आधारित थी, बुरी तरह प्रभावित हुई है। विस्थापन और पुनर्वास की असफल नीतियों ने उन्हें न केवल आर्थिक रूप से कमजोर किया है, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पहचान, सामाजिक संरचना और मानसिक स्वास्थ्य पर भी गहरा असर डाला है (मेहर, 2009)। वैश्वीकरण के कारण उपजे उपभोक्तावादी संस्कृति और बाजारवाद ने स्थानीय उत्पादों और परंपराओं को हाशिए पर धकेल दिया है। पारंपरिक ज्ञान, औषधि पद्धतियाँ और सामूहिक उत्पादन प्रणाली धीरे-धीरे

विलुप्त हो रही हैं। साथ ही, बाहरी बाजारों और तकनीकी हस्तक्षेपों ने आर्थिक असमानता को और गहरा किया है, जिससे आदिवासी समाज में बेरोजगारी, निर्धनता और सामाजिक असंतुलन बढ़ा है। शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं के प्रचार-प्रसार में भी असमानता बनी हुई है, जिससे वे नई प्रतिस्पर्धा में पिछड़ते जा रहे हैं। वैश्वीकरण के प्रभाव ने पारंपरिक भूमि अधिकारों को भी कमजोर किया है, जिससे आदिवासी समुदाय अपने ही संसाधनों पर नियंत्रण खो बैठा है। महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय हुई है, क्योंकि वे दोहरी मार झेल रही हैं—एक ओर आजीविका का संकट और दूसरी ओर पारिवारिक जिम्मेदारियाँ। कुल मिलाकर, वैश्वीकरण ने आदिवासी समाज की आत्मनिर्भर आर्थिकी को कमजोर कर दिया है और उन्हें ऐसे आर्थिक ढांचे में धकेल दिया है जहाँ वे हाशिए पर खड़े होकर अपनी पहचान, संस्कृति और जीवनशैली की रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हैं। यदि यह प्रक्रिया स्थानीय सहभागिता, पर्यावरणीय न्याय और सांस्कृतिक सम्मान के सिद्धांतों पर आधारित न हो, तो यह आदिवासी समाज के अस्तित्व के लिए गंभीर चुनौती बन सकती है।

वैश्वीकरण के झारखंड के आदिवासी समुदाय की आर्थिकी पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभाव को कम करने हेतु सुझाव

झारखंड के आदिवासी समुदाय पर वैश्वीकरण के नकारात्मक प्रभावों को कम करने के लिए एक समग्र, संवेदनशील और स्थानीय-संस्कृति पर आधारित नीति-निर्माण की आवश्यकता है। सबसे पहले, यह आवश्यक है कि आदिवासी समुदायों के पारंपरिक संसाधनों—जैसे जल, जंगल और जमीन—पर उनके स्वाभाविक अधिकारों की कानूनी और व्यावहारिक रूप से पूर्ण रक्षा सुनिश्चित की जाए। "वन अधिकार अधिनियम" (2006) जैसे कानूनों को प्रभावी ढंग से लागू किया जाना चाहिए ताकि वे अपने पारंपरिक आवास, कृषि भूमि और वन उत्पादों पर अधिकार बनाए रख सकें। दूसरा, विकास परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण की प्रक्रिया में समुदाय की पूर्व स्वीकृति (Free, Prior and Informed Consent) अनिवार्य की जानी चाहिए और पारदर्शिता के साथ पुनर्वास एवं मुआवज़े की व्यवस्था की जानी चाहिए। तीसरा, पारंपरिक आजीविका जैसे लघु वनोपज, हस्तशिल्प, बांस एवं लकड़ी शिल्प, जैविक खेती, और स्थानीय खाद्य प्रसंस्करण उद्योग को बढ़ावा देने के लिए प्रशिक्षण, वित्तीय सहायता और बाज़ार उपलब्ध कराया जाना चाहिए। चौथा, स्थानीय उत्पादों को वैश्विक बाज़ारों से जोड़ने हेतु ई-कॉमर्स प्लेटफ़ॉर्म, सहकारी समितियाँ और स्वयं सहायता समूहों को सशक्त किया जाना चाहिए ताकि आदिवासी समुदायों को बिचौलियों से मुक्ति मिल सके। पाँचवाँ, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं को आदिवासी क्षेत्रों में पहुंचाने के लिए विशेष योजनाएं बनाई जानी चाहिए, जिनमें उनकी मातृभाषा और सांस्कृतिक संवेदनाओं का सम्मान हो। साथ ही, युवाओं को तकनीकी शिक्षा, उद्यमिता, और डिजिटल साक्षरता के क्षेत्र में प्रशिक्षित कर उनके लिए वैकल्पिक रोजगार के द्वार खोले जा सकते हैं। छठा, महिला सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए, क्योंकि महिलाएं पारंपरिक अर्थव्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाती हैं। स्वयं सहायता समूहों और महिला सहकारी समितियों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाकर उन्हें आय अर्जन के नए अवसर दिए जा सकते हैं। अंततः, विकास की किसी भी योजना में आदिवासी समुदाय की भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए ताकि निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में उनकी आवाज़ को स्थान मिले और वे अपने हितों की रक्षा स्वयं कर सकें। यदि वैश्वीकरण की प्रक्रिया को "स्थानीय सहभागिता, सांस्कृतिक संवेदनशीलता और सामाजिक न्याय" के सिद्धांतों के साथ संतुलित किया जाए, तो यह आदिवासी समुदाय के लिए विनाशकारी नहीं बल्कि सशक्तिकारी सिद्ध हो सकती है।

निष्कर्ष :

वैश्वीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसने समस्त विश्व को एक साझा आर्थिक और सामाजिक मंच पर लाकर खड़ा कर दिया है। हालांकि इसने अनेक अवसर प्रदान किए हैं, विशेष रूप से तकनीकी प्रगति, बाज़ार विस्तार और संसाधनों के आदान-प्रदान के रूप में, परंतु इसके प्रभाव क्षेत्र विशेष और समुदाय विशेष के अनुसार भिन्न रहे हैं। झारखंड के आदिवासी समाज पर इसका प्रभाव जटिल और बहुआयामी रहा है। जहां कुछ सकारात्मक पहलुओं जैसे – वैश्विक बाज़ारों तक पहुंच, सूचना का प्रवाह, और पारंपरिक उत्पादों की मांग में वृद्धि से आर्थिकी को नई दिशा मिली है, वहीं दूसरी ओर इसने उनके पारंपरिक संसाधनों, आजीविका, सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पहचान को गंभीर संकट में डाल दिया है।

आदिवासी समाज की आर्थिकी जो कि प्रकृति पर आधारित, सामूहिक और आत्मनिर्भर रही है, वह अब बाहरी बाजार और औद्योगिक हितों के दबाव में कमजोर हुई है। भूमि अधिग्रहण, खनन, विस्थापन, और पुनर्वास की विफल नीतियों ने उन्हें आर्थिक, सामाजिक और मानसिक

रूप से असुरक्षित बना दिया है। पारंपरिक ज्ञान और जीवनशैली पर आधारित आर्थिक गतिविधियाँ अब प्रतिस्पर्धी पूंजीवादी मॉडल के सामने टिक नहीं पा रही हैं।

इस परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक है कि वैश्वीकरण को बिना समझे-समझाए स्वीकार करने के बजाय, इसे स्थानीय परिस्थितियों, संस्कृति, और जीवन मूल्यों के अनुरूप ढालने की आवश्यकता है। यदि नीति निर्माण में आदिवासी समुदाय की भागीदारी सुनिश्चित की जाए, संसाधनों पर उनके अधिकारों की रक्षा की जाए, और पारंपरिक आर्थिकी को तकनीकी व बाजार सहयोग से सशक्त किया जाए, तो वैश्वीकरण उनके लिए अवसर का द्वार भी बन सकता है। अतः यह समय की मांग है कि हम विकास और वैश्वीकरण की परिभाषा को पुनः गढ़ें — ऐसी परिभाषा जो समावेशी, संवेदनशील और न्यायसंगत हो।

संदर्भ सूची

1. भट्टाचार्य, एस., सचदेव, बी.के., और सेठ, ए. (2021). इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन इंडियन इकॉनमी, पॉलिटिक्स एंड सोसाइटी, इट्स ट्रांसफॉर्मेशन एंड फ्यूचर एस्पेक्ट्स. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ रिसेंट एडवांसेज इन मल्टीडिसिप्लिनरी टॉपिक्स, 2(11), 131-138.
2. चौधरी, एस.एन. (2018). ग्लोबलाइजेशन, एनवायरनमेंटल डिग्रेडेशन एंड ट्राइबल आइडेंटिटी: विद पार्टिकुलर रेफरेंस टू सेंट्रल इंडिया. इन ग्लोबलाइजेशन, एनवायरनमेंट एंड सोशल जस्टिस (पीपी. 241-260). रूटलेज इंडिया.
3. दास, एन. (2013). इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन सस्टेनेबल डेवलपमेंट इन द इंडियन इकॉनमी. जर्नल ऑफ इंटरनेशनल इकोनॉमिक्स, 4(2), 99.
4. घोष, पी. (2015). इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन ट्राइबल वर्ल्ड ऑफ वेस्ट बंगाल. आर्ट्स एंड सोशल साइंसेज जर्नल, 6(2), 104.
5. जयसवाल, डी.एन., और साहा, एस. (2014). मार्जिनलाइजेशन ऑफ ट्राइबल कम्युनिटीज ड्यू टू ग्लोबलाइजेशन. इंडियन जर्नल ऑफ डालिट एंड ट्राइबल स्टडीज, 2(2), 37-54.
6. कुमारी, एस., और सिन्हा, के. (2023). झारखंड के आदिवासी महिलाओं का स्वास्थ्य एवं पोषण - चुनौतियां एवं समाधान. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ फूड एंड न्यूट्रिशनल साइंसेज, 12(स्पेशल इश्यू 1), 589-594.
7. महमूद, एफ. (2021). ग्लोबलाइजेशन एंड एक्सक्लूजन ऑफ मार्जिनलाइज्ड सेक्शन्स ऑफ द सोसाइटी: एन इंडियन एक्सपीरियंस. सोसाइटी एंड सस्टेनेबिलिटी, 3(1), 10-17.
8. मेहर, आर. (2009). ग्लोबलाइजेशन, डिस्प्लेसमेंट एंड द लाइवलीहुड इश्यूज ऑफ ट्राइबल एंड एग्रीकल्चर डिपेंडेंट पुअर पीपल: द केस ऑफ मिनरल-बेस्ड इंडस्ट्रीज इन इंडिया. जर्नल ऑफ डेवलपिंग सोसाइटीज, 25(4), 457-480.
9. सोमलकर, पी. (2006). इम्पैक्ट ऑफ ग्लोबलाइजेशन ऑन इंडियन इकॉनमी. अभिनव नेशनल मंथली रेफर्ड जर्नल ऑफ रिसर्च इन आर्ट्स एंड एजुकेशन, 1(8), 5-11.
10. वेंकटेश्वर, अमित कुमार (2023). ट्राइबल लाइवलीहुड इन द एज ऑफ ग्लोबलाइजेशन: सम क्रिटिकल रिफ्लेक्शन्स. इंटरनेट. जे. अप्ल. सोस. साइंस., 10 (5&6): 328-334.